शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 सितम्बर 2013

आधुनिक भारतीय दलित चेतना में डॉ. अम्बेडकर के विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन

नानकचन्द शोधर्थी, डॉ. के. पी. सिंह
इतिहास और सभ्यता विभाग

शोध संक्षेप

भारतीय दलित समाज के उत्थान में बाबा साहब आंबेडकर का अतुलनीय योगदान है। उन्होंने इस समाज के प्रति सदियों तक हुए अत्याचार और उत्पीड़नों का जितना विशद विश्लेषण किया है, उतना और किसी ने नहीं। एक और तो अंग्रेजों की गुलामी और दूसरी और सवर्णों के शोषण से पीड़ित दलित समुदाय में आत्मसम्मान की चेतना जागृत करना वास्तव में भागीरथी प्रयत्न था। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

भारतीय समाज में जाति व्यवस्था एक विकराल समस्या रही हैं, जिसका प्रतिबिम्ब आज भी दिखाई पडता हैं। अस्पृश्यता की अमिट छाप ने भारतीय समाज का विभाजन कर्म के आधर पर नहीं बल्कि जन्म के आधर पर स्वीकार किया है, जो उदीयमान और विकसित भारत के उद्देश्यों को साकार करने के मार्ग में विरल चुनौती है। आदमी को आदमी न समझना यह विडंबना तो सदियों से चली आ रही हैं। आदमी इतिहास तो लिखता हैं लेकिन इससे कुछ सीखता नहीं है और ऐसे ही अमानवीय अत्याचारों से इतिहास भरा हुआ है।

दलितों की सामाजिक और आर्थिक समस्या पर एक ओर सरकारी कार्यक्रम हैं तो दूसरी ओर दलितों के तमाम बौद्धिक और सामाजिक आंदोलन। दलित समस्या एक अंतर्राष्ट्रीय मुद्दा है और वर्तमान में दलित चेतना और दलित हत्याकांडों पर गंभीरतापूर्वक चर्चाएँ और संगोष्ठियाँ होती हैं।1

यही कारण हैं कि इस मिसाइलयुग में दलित अपने शोषण और उत्पीडन की समस्याओं को विश्व पटल पर रखने में कामयाब दिखाई पड रहे हैं। दलित चेतना एक गंभीर मुद्दा है। हम समझ सकें कि भारत में दलितों के उत्पीडन का आधार क्या है ? विज्ञान युग में क्यों दलितों के साथ बथानी टोला हत्याकांड, खैरलांजी हत्याकांड, आगरा हत्याकांड, भगाना हत्याकांड, बेल्छीपुर हत्याकांड, सलैयया हत्याकांड, भवरी देवी हत्याकांड, मिर्चपुर हत्याकांड, कुम्हेर हत्याकांड, पिपरा हत्याकांड और नारायणपुर हत्याकांड जैसी घटनाएँ घटित होंती हैं ? अम्बेडकर के नाम पर तमाम राजनैतिक दल और सामाजिक आन्दोलन दलितों के वोट बैंक का दुरूपयोग करके दलित समुदाय को भ्रमित कर रहे हैं ? दलित हत्याकांडों और दलितों के साथ रोजमर्रा की घटनाओं को दलित और गैर दलित राजनीतिज्ञ संसद में रखने में नाकामयाब ही दिखाई पडते हैं और सामाजिक आन्दोलन दलित शोषण और दमन की घटनाओं को जनमानस पटल पर रखने में असपफल

दिखाई पड रहे है क्योकि या तों ये खरीद लिये जाते हैं या तोड़ दिये जाते हैं।

हरबर्ट माक्र्यूस के शब्दों में कहें तो दलित चेतना एक सांस्कृतिक चेतना है और इसीलिए विद्रोही भी है।2

यदि भारत के परिप्रेक्ष्य में विचार करें तो डॉ. अम्बेडकर ने दलितों के सामाजिक और राजनैतिक ढाँचे में सुधार लाने हेतु जो तरीके अपनाये उनसे भारत में दलित चेतना का निर्माण हुआ। डॉ. अलेक्जेन्डर जेनर ने चेचक और जीवाणुओं को जड़ से समाप्त करने के लिए वैक्सीन का इस्तेमाल किया उसी तरह डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय समाज में अभिशप्त जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता की बीमारी को समाप्त करने के लिए वैक्सीन के रूप में शिक्षा को अपनाया। भारतीय समाज में जितनी पुरानी जाति व्यवस्था हैं, उससे भी पुरानी हैं दलित चेतना।3

डॉ. अम्बेडकर ने इंडियन लेबर पार्टी, रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया और ऑल इंडिया शिड्यूल कास्ट पफेडरेशन का निर्माण करके सवर्णो के द्वारा दलितों के साथ किये जाने वाले अत्याचारों के विरुद्ध आन्दोलन चलाकर बुद्धिजीवियों और अंग्रेजों का ध्यान भी दलित समस्या की ओर आकर्षित किया। इसीलिए डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि राजनैतिक सत्ता ही वह चाबी है जिससे विकास के सारे बन्द दरवाजे खुलते हैं।4

जब हम आधुनिक इतिहास पर नजर डालते हैं तो ये पाते हैं कि कुछ बुद्धिजीवी दलित कुछ शीर्ष स्थानों पर बैठे हैं। मगर सच यही हैं कि ये लोग भी अपने समाज को ऊपर उठाने में पूर्ण रूप से सक्षम नजर नहीं आ रहे हैं। शिक्षित बनों, संघर्ष करो और संगठित रहो का संदेश पूर्ण रूप से सफल नजर नहीं आ रहा है क्योंकि भारतीय दलित बड़े पैमाने पर अपने संघर्ष में आज भी असफल हैं। गांधी को स्वदेशी समाज की नैतिकता से आशा थी कि उसका समाज समानता की विचारधरा पर आधरित एक धर्मनिरपेक्ष समाज होगा। बाबा साहेब अम्बेडकर ने दलितों की समस्याओं को विश्लेषित किया और अपनी तर्कशील बुद्धिमत्ता से बुद्धिजीवियों, समाज सुधारकों और लेखकों को कसौटी पर तौलने और परखने के लिए विवश कर दिया। लोहिया को स्वाधीनता में निहित क्रांतिकरण की प्रकिया पर विश्वास था और नेहरू को नवराष्ट्र निर्माण की आशा की किरण नजर आ रही थी।

दलितों को भारतीय हिन्दू समाज में अपना स्थान पाने के लिए बुद्वि, विश्वास, शिक्षा, मेहनत, लगन, एकताद्ध के मूलमंत्रा को अपनाना ही होगा। इतिहास के पन्नों पर समाज सुधरकों के वो सामाजिक आंदोलन आज भी हाशिये पर हैं, जिन्होने दलित चेतना और दलित उत्थान में विशेष भूमिका निभाई।

सन् 1925 में डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि अस्पृश्यता का सर्मथन करने वाले ये खोखले धर्मशास्त्र सारी जनता का अपमान कर रहे हैं, सरकार को उन्हें बहुत पहले कैद कर लेना चाहिए था। अगर दलित हिन्दू शास्त्रों, देवी देवताओं और पुराणों और गाथाओं जैसे शेषनाग के फन पर पृथ्वी का होना, राजा बलि और वामनावतार की कथा, गंगा का शिवजी की जटा पर अवतरण होना, नृसिंहवतार, होलिका दहन में होलिका का सुरक्षित बचना आदि गाथाओं से इतिहास भरा

पड़ा हुआ है लेकिन आधुनिक युग में व्यक्ति इन घटनाओं का तिरस्कार करने लगा है।5

प्रत्येक युग इतिहास का, उसकी परम्पराओं का और प्रयोगों का पुनर्मूल्यांकन करता हैं। भारत में वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था का मूल प्राक-आधुनिक अवधरणा में निहित हैं। यह अवधरणा हिंदू धर्म में वर्णित सामाजिक और धर्मिक मान्यताओं पर आधरित है, जिसमें समाज को श्रैणीबद्ध करके ऊँच-नीच की दीवार खीचकर जन्म से ही कर्म को थोप दिया जाता है। भारत के सामाजिक इतिहास में वर्ण व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण स्थान है, जो वैदिक काल से लेकर आज भी अपनी पैठ बनाये हुए है। वर्ण व्यवस्था की अवधरणा जिस तरह समाज में पैदा हुई थी, वर्तमान में उसका भौतिक रूप बदल चुका है और दलितों के घर में हिंदू देवी देवताओं राम, कृष्ण के साथ साथ गौतम बुद्ध और डॉ. अम्बेडकर की तस्वीरें भी देखने को मिल जाती है,6 क्योंकि दलित समाज जागरुक हो गया है। दलित समाज में असमानताओं और शोषण के विरुद्ध एक चेतना का निर्माण हुआ है वह है दलित चेतना।

जिस समय डॉ. अम्बेडकर दलितों को उनके अधिकारों को दिलाने के लिए जनसंभाए कर रहे थे, उस समय सन् 1927 में उत्तर प्रदेश में स्वामी अछूतानंद ने दलितों में चेतना जागृत की और आहान किया कि दलितों को इस देश में पूर्ण आजादी चाहिए।7

उस समय दलित समाज मनुवादियों द्वारा बनाये गये सिद्धांतों और रुढ़ीवादी नीतियों से दिशाविहीन, शोषित और उत्पीडित था।

डॉ. अम्बेडकर ने 25 नवम्बर 1949 को अपने सम्मेलन में कहा था कि संविधन राजनीतिक अधिकारों की गारंटी देता है और दलित समाज को आर्थिक समानता, कमजोर वर्ग को समाज में समानता दिलाने का प्रयास सवर्ण समाज के लोगों को करना चाहिए जिस तरह जापान में उच्च वर्ग के लोगों ने जातिभेद को समाप्त करने के प्रयास किये और यह विदित है कि असमानता का निराकरण होने के पश्चात् जापान संसाधनों से सम्पन्न हैं लेकिन भारत में इंटरनेट और भूमंडलीकरण के युग में भी जाति अपनी पैठ बनाये हुए है। स्वतन्त्राता आन्दोलन के दौरान राजनैतिक आजादी के साथ सामाजिक रूप से समानता पर आधरित आधुनिक समाज का निर्माण करने का दृढ़ संकल्प लिया गया था क्योंकि उसका उददे्श्य था कि जाति, धर्म, लिंग और भाषा के आधर पर किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा। समाज में पिछड़ेपन और अस्पृश्यता की समस्या को समाप्त करने का वादा भी किया गया था, लेकिन भारत में जो आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था कायम की गई थी, वह काम पूरी ईमानदारी के साथ नहीं किया गया हैं। सवर्ण समाज यह समझ पाने में भी नाकामयाब रहा हैं कि शोषित और उत्पीडित समुदाय को ऊपर उठाने का दारोमदार समाज पर हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने बचपन से अछूतपन की वेदना को सहन ,किया था और अस्पृश्यता जैसी बीमारी को दूर करने का संकल्प लिया था क्योंकि उनका मन भारतीय हिंदू समाज की पाखंडी नीतियों और कुप्रथाओं से गमगीन हो गया था, इसीलिए उन्होंने 1936 में यरवदा सम्मेलन में कहा था कि मैंने हिंदू धर्म में जन्म

लिया है, यह मेरे हाथ की बात नहीं लेकिन मैं हिंदू धर्म में मरुँगा नहीं। उनकी इस घोषणा से दलित समाज में हलचल मच गई और पूरा दलित समाज गमगीन हो गया कि बाबा साहेब कौन सा धर्म अपनायेगे ? यहा यह स्मरण करने योग्य है कि बाबा साहेब ने उदबोध्न किया था मै उसी धर्म, सभ्यता और संस्कृति को स्वीकार करुँगा जिसकी उत्पत्ति इस देश में हुई हैं। अंत में उन्होंने उसी धर्म को अपनाया जिसकी उत्पत्ति भारत में हुई थी वह था बौद्ध धर्म। बौद्ध धर्म ही वह धर्म था जो समानता, भाईचारे और स्वतंत्राता की विचारधरा पर आधरित था, इसीलिए सभी धर्मों का मूल्यांकन करने के पश्चात् बाबा साहेब ने बौद्ध धर्म को स्वीकार करना उचित समझा।

डॉ. अम्बेडकर ने दलितों को असमानता, हिंदू ध्म के प्रकोप से बचाने और उपजातियों में विखंडित दलित समाज का एकीकरण करने के लिए 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में पाॅंच लाख लोगों के साथ धर्म परिवर्तन किया, लेकिन जब हम नजर डालते हैं दलितों की दशा और दिशा पर तो ये पाते है कि समाज की मान्यताओं में भी निरंतर परिवर्तन हो रहा है क्योंकि महात्मा ज्योतिबा पफुले का समय बीत गया है। रामायण, महाभारत और पौराणिक युग इतिहास में परिवर्तित हो गया है। आज दलित समाज में अशिक्षा, रुढिवादिता और सामाजिक विषमताओं की बेड़ियाँ टूटने लगी हैं। दलितों को उनके अधिकार मिलना शुरू हो गये हैं। सामाजिक आंदोलन दलित समाज के साथ हाने वाली शोषण और उत्पीडन की घटनाओं को जनमानस पटल पर रखने में कामयाब दिखाई पड़ रहे हैं।8 डॉ. अंबेडकर ने कहा था कि "राष्ट्र की गुलामी से अस्पृश्य समाज की गुलामी की हालत ज्यादा दर्दनाक है। इसे समाप्त करने के लिए अस्पृश्यता समाप्त करनी पडेगी, अन्यथा धर्मान्तरण का रास्ता अपनाना पडेगा।" बौद्ध धर्म ग्रहण करने के पश्चात भी दलित समाज में आपसी मतभेद और विभिन्नताए व्याप्त हैं। धर्म परिवर्तन करने वालों की कोई जाति नहीं होती है। यह सत्य है कि धर्मांतरण और अंतरर्जातीय विवाह का मार्ग भी दलित समाज को सामाजिक समानता दिलाने में नाकामयाब ही रहा हैं। संविधन के अनुच्छेद-17 के द्वारा अस्पृश्यता समाप्त कर दी गई हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में भी कुछ बदलाव जरुर आया है। खाने-पीने की छुआछूत सवर्ण ही नहीं करते हैं, दलितों में भी हैं। जातिभेद और वर्णभेद को मिटाना आसान नहीं है, लेकिन परिवर्तन जरुर आ रहा है। जातिभेद की विकराल समस्या को समाप्त करने के लिए सामाजिक क्रांति की आवश्यकता महसूस हो रही है। इसमें कोई संदेह नही हैं कि असमानता हर समाज और युग में किसी न किसी रुप में विद्यमान रही है। यह सर्वविदित है कि आधुनिक दलितों की सामाजिक, आर्थिक, धर्मिक, राजनैतिक स्तर और दलित चेतना में निरन्तर परिवर्तन हो रहा हैं। संवैधनिक अधीकार लागू होने के पश्चात् भी राष्ट्र में अनेक उतार चढ़ाव आये हैं और अछूतपन की समस्या के निराकरण के लिए तरह- तरह के प्रयास किये जा रहे हैं।

अम्बेडकर ने कहा था कि अंतर्जातीय विवाह जाति के तिलिस्म को तोडने में उपयोगी साबित हो सकते हैं 9 और यह विदित है कि सवर्णो ने उनके इस मार्ग को अपनाया है लेकिन भारतीय समाज के पहलुओं का जब मूल्यांकन करते है तो

यह प्रतीत होता है कि सवर्ण समाज आज भी दलित समाज से अपनी दूरी बनाये हुए है।

भारतीय समाज में दलितों को आज भी सामाजिक समानता प्राप्त नहीं हो पाई है लेकिन परिवर्तन अवश्य आ रहा है। दलितों की शैक्षिक और आर्थिक स्थिति में कुछ सुधर अवश्य आया है। दलितों की साक्षरता दर 1961 में 10.2 प्रतिशत थी लेकिन 1991 में 37.41 प्रतिशत हो गई है और स्कूलों में भी 1981 और 1991 के बीच उनका नामांकन दुगुना हो गया है। सरकारी सेवा में दलित कर्मचारियों की संख्या 1956 में 2, 12, 000 से बढ़कर 1992 में 3, 69, 000 हो गई है। लेकिन अगर इन सुधरों का विश्लेषण करके देखा जाये तो दलित समाज भारतीय समाज के अन्य समूहों की तुलना में कापफी पीछे है। क्योकि दलितों की साक्षरता दर 37 प्रतिशत है और गैर दलितों की साक्षरता दर 57 प्रतिशत है। 1981 में दलितों साक्षरता दर 39.1 से बढ़कर 2001 में 62.8 हो गई हैं।10

सन् 1960 से 1970 के मध्य उत्तरप्रदेश में रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के नेता बी.पी.मौर्य ने सामाजिक आन्दोलन चलाकर दलित चेतना को मजबूत बनाने में अहम भूमिका निभाई और हिंदू धर्म में वर्णित कुप्रथाओं का विरोध् किया। डॉ. अम्बेडकर आरक्षण के पक्षधर नहीं थे लेकिन आरक्षण व्यवस्था राजनीतिक दलों के लिए सत्ता का सुख भोगने का साधन और साध्य बन गई। डॉ. अम्बेडकर ने अंतिम दिनों में कहा था कि मैं इस कारवां को बडी मेहनत और संघर्षो के साथ यहां तक लाया हूँ अगर नहीं ले जा सकते हो तो यहीं छोड देना। डॉ. अम्बेडकर का यह कथन सत्य प्रतीत होता है कि मुझे तो अपनों ने ही धोखा दिया हैं।

कांशीराम ने उत्तर प्रदेश में दलितों को आत्मसम्मान दिलाने, समतामूलक समाज बनाने, जाति उन्मूलक समाज बनाने, विभाजित समाज को जोडने, बामसेफ, दलित शोषित संघर्ष समिति और बहुजन समाज पार्टी की स्थापना करके दलितों की सामाजिक, आर्थिक, धर्मिक और राजनीतिक दशा में सुधरों को नई दिशा दी। उत्तर प्रदेश में सामाजिक और राजनैतिक आंदोलनों का रास्ता पहले से ही तैयार था क्योंकि दलित समुदाय के लोग न तो नीला झंडा भूल पाये थे और न हाथी के चिंह को भूल पाये थे। इसीलिए कांशीराम ने चुनाव चिह्न हाथी का ही प्रयोग किया। शाहू जी महाराज, महात्मा ज्योतिबा पफूले, नारायण स्वामी पेरियार आदि विभूतियों को दलितो के नायकों के रुप में पेश करके चुनावी मैदान में उतारा जिससे कांशीराम का राजनीति में मार्ग प्रशस्त हुआ। कांशीराम दूरदर्शी नेता थे, उन्हें विश्वास हो गया था कि मंजिल दूर नहीं हैं। जिस तरह स्थिर पानी में पत्थर मारने से विक्षोभ पैदा हो जाता है उसी तरह कांशीराम के विचारों ने दलित समाज में उथल-पुथल मचा दी। उन्होनें दलित वोट बैंक को कांग्रेस से अलग करने के लिए भागीदारी ब्रहाशास्त्र का प्रयोग किया और दलित समाज को उनकी वोट के मूल्यों का आभास कराया कि दलितों की संख्या 85 प्रतिशत है और 15 प्रतिशत वाला सवर्ण उन पर सदियों से शासन कर रहा हैं। डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि गुलाम को गुलामी का अहसास करा दो, वह तुरंत विद्रोह कर देगा। इसीलिए भागीदारी आंदोलन ने जातीय ध्रुवीकरण

की राजनीति को ही विखंडित कर दिया और कांशीराम ने दलितों के अंदर चेतना जाग्रत करके दलितों को उनकी वोट की कीमत का बोध् कराया। कांशीराम ने दलित समाज में चेतना लाने के लिए आह्वान किया 'जाति तोड़ो', 'समाज जोड़ो,' 'जातियों की चीनी दीवार नष्ट करो' और 'भाईचारे के पुल बनाओं'।11

उपसंहार

उपर्युक्त विवेचनों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक दलित चेतना में डॉ. अम्बेडकर का महत्तवपूर्ण योगदान है। क्योंकि डॉ. अम्बेडकर के बिना दलित चेतना और दलित आंदोलन की कल्पना नहीं की जा सकती हैं। वैदिक काल से लेकर वर्तमान में भी जाति व्यवस्था अपनी पकड बनाये हुए है लेकिन निरंतर परिवर्तन अवश्य हो रहा है और भारतीय हिंदू समाज और दलित समाज को उनके तर्कशील सिंद्वांतों और विचारों को अपनाने की आवश्यकता है। दलितों को समाज में सामाजिक समानता दिलाने में सवर्ण वर्ग को भी प्रयास करने चाहिए जिससे सभी वर्ग और समुदाय मिलकर डॉ. अम्बेडकर के संजोये हुए सपने को साकार करके अस्पृश्यता का निराकरण कर सकें।

सन्दर्भ

1. पासवान, डॉ. चंद्रशेखर, बौ(ध्म और आधुनिक दलित चेतना, नई दिल्ली: दिल्ली विश्वविद्यालय, 1998

2 भारती, कंवल, मायावती और दलित आन्दोलन, नई दिल्ली: रमणिका पफाउंडेशन, 2004

3 गुप्ता, रमणिका, दलित चेतना-सोच, बिहारः नवलेखन प्रकाशन, 1998, पृष्ठ-35

4 गुप्ता, रमणिका, दलित चेतना-सोच, बिहारः नवलेखन प्रकाशन, 1998, पृष्ठ-110

5 वही पृष्ठ-7

6 लिंबाले, शरण कुमार, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 1997, पृष्ठ-70

7 वही पृष्ठ-35

8 आर्य, लाल, दलित समाजः आज की चुनौतियाँ नई दिल्ली: प्रकाशन संस्थान, पृष्ठ- 21

9 आर्य, लाल, दलित समाजः आज की चुनौतियाँ, नई दिल्ली: प्रकाशन संस्थान, पृष्ठ- 41

10 माइकल, एस.एम., आधुनिक भारत में दलित दृष्टि एवं मूल्य, नई दिल्लीः सेज प्रकाशन, 2010, द्वितीय संस्करण, पेज न. 104-105

11 नैमिशराय, मोहनदास, बहुजन समाज, नई दिल्ली: नीलकंठ प्रकाशन, 2000, पृष्ठ 20-32